नीहार

महादेवी वर्मा

साहित्य भवन (प्राइवेट) लिमिटेड
इलाहाबाद

षष्ठ आवृत्ति : १९६२ ईसवी

तीन रुपये

मुद्रक—यू० पी० प्रिन्टिङ्ग प्रेस, ४२, एडमॉन्स्टन रोड, इलाहाबाद।



परिचय

आजकल जिसे छायावाद कहते हैं, इस ग्रंथ की अधिकांश कविताएँ उसी ढंग की हैं। छायावाद किसे कहते हैं? उसे छायावाद कहना चाहिये अथवा रहस्यवाद यह वादग्रस्त विषय है। स्वयं छायावादी-कवि अब तक इस बात को निश्चित नहीं कर सके, कि वे अपनी नूतन प्रणाली की कविताओं को छायावाद कहें अथवा रहस्यवाद। इस प्रकार की कविताओं की परिधि इतनी विस्तृत हो गई है कि उन सबका अन्तर्भाव छायावाद अथवा रहस्यवाद में नहीं हो सकता। अतएव कोई-कोई उसको हृदय-वाद कहने लगे हैं, किन्तु यह संज्ञा अति-व्याप्ति दोष से दूषित है। मिस्टिसिज़्म (Mysticism) का यथार्थ-अनुवाद रहस्यवाद ही हो सकता है, छायावाद शब्द में उसकी छाया दिखलायी पड़ती है, मूर्ति नहीं। रहस्यवाद में अस्पष्टता, अपरिच्छिन्नता और सर्व साधारण की दुर्बोधता झलकती है, वह चमत्कारक होकर अचिन्तनीय भी है, छायावाद में यह बात नहीं पायी जाती। वह स्निग्ध, मनोरम, और प्राञ्जल है, साथ ही उतना अचिन्तनीय नहीं, शायद इसीलिये उस पर अधिकतर सहृदयों की स्वीकृति की मुहर लग गई है। छायावाद शब्द प्रचलित हो गया है, और अपने उद्देश की पूर्ति भी कर रहा है। ऐसी अवस्था में अब इस विषय में अधिक इदं कुतः की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। किसी विषय के लिए जब कोई शब्द रूढ़ि हो जाता है, तो एक प्रकार से वह अपेक्षित आवश्यकता के लिए स्वीकृति समझा जाता है, फिर वाद-विवाद क्या? संसार में अधिकांश नामकरण इसी प्रकार हुआ है।

हिन्दी-कविता-क्षेत्र में आजकल छायावाद की कविताएँ इस अधिकता से हो रही हैं, और युवक दल उसकी ओर इतना आकृष्ट है कि वर्त्तमान समय को हम छाया-वाद युग कह सकते हैं। फिर भी छाया-वाद की कविताएँ अभी आदिम अवस्था में हैं, उद्गम से बाहर निकलती हुई, अधिकांश-सरिताओं के समान उनमें वेग है, प्रवाह है, उल्लास और कल्लोल है, किन्तु वांछित धीरता नहीं, वह स्थान-स्थान पर

तरंगाकुल और आविल भी है। ऐसा होना स्वाभाविक है, काल पाकर उनको समधरातल भी मिलेगा, और उस समय वे मंजु-मंथर गामिनी और यथेच्छस्वच्छतामयी एवं सरस होंगी। कवि कार्य सुगम नहीं, वह अगम्य है, वह सर्वथा निर्दोष नहीं हो सकता। जब महा कवियों में भी भ्रम, प्रमाद, और त्रुटियाँ पायी जाती हैं, तो उस पर बात-बात में उँगली उठाना क्या उचित होगा, जिसने अभी कविता क्षेत्र में पदार्पण किया है। प्रेम से दोष प्रक्षालन के लिए किसी को सतर्क करना अवांछनीय नहीं, किन्तु ऐसे अवसरों पर मक्षिका प्रवृत्ति से काम लेना संगत नहीं। थोड़े समय में भी कतिपय छायावादी कवियों ने हिन्दी-संसार में कीर्ति अर्जन की है, और उनमें पर्याप्त-भावुकता का विकास देखा गया है। उन्होंने अपने गहन पथ को सरल बनाया है, और कोमल-कान्त पदावली पर अधिकार करके बड़ी भावमयी कविताएँ की हैं। उन्हीं में से एक श्रीमती महादेवी वर्मा कवयित्री भी हैं।

यह ग्रन्थ उनका आदिम ग्रन्थ है, फिर भी इसमें उनकी प्रतिभा का विलक्षण विकास देखा जाता है। ग्रन्थ सर्वथा निर्दोष नहीं, किन्तु इसमें अनेक इतनी सजीव और सुन्दर पंक्तियाँ हैं, कि उनके मधुर प्रवाह में उधर दृष्टि जाती ही नहीं। प्रफुल्ल पाटल प्रसून में काँटे होते हैं, हाँ, किन्तु उसकी प्रफुल्लता और मनोरंजकता ही मुग्धकारिता की सम्पत्ति है। ऐसा कहकर मैं नियमन की अवहेलना नहीं करता हूँ—सहृदयता का नेत्रोन्मीलन कर रहा हूँ। कहा जा सकता है, एक स्त्री का उत्साह वर्द्धन करने के लिए बातें कही गईं। मैं कहूँगा यह विचार समीचीन नहीं; ऐसा कहना स्त्री जाति की सर्वतोमुखी प्रतिभा को लांछित करना है। वास्तव में बात यह है कि ग्रन्थ की भावुकता और मार्मिकता उल्लेखनीय है उसका कोमल शब्द-विन्यास भी अल्प आकर्षक नहीं।

मैं श्रीमती महादेवी वर्मा का हिन्दी-साहित्य क्षेत्र में सादर अभिनन्दन करता हूँ, और उनसे यह विनय भी, कि उनकी हृत्तंत्री के अपूर्व झङ्कार में भारतमाता के कण्ठ की वर्तमान ध्वनि भी श्रुति होनी चाहिये, इससे उनकी कीर्ति उज्ज्वल से उज्ज्वलतर होगी माता की व्यथाओं के अनुभव करने की मार्मिकता मातृत्व पद की अधिकारिणी को ही यथातथ्य हो सकती है।

काशी धाम }
२८-४-३० }

हरिऔध

सूची

पृष्ठ



विसर्जन

निशा की, धो देता राकेश
चाँदनी में जब अलकें खोल,
कली से कहता था मधुमास
'बता दो मधु मदिरा का मोल';

झटक जाता था पागल वात
धूल में तुहिनकणों के हार,
सिखाने जीवन का सङ्गीत
तभी तुम आये थे इस पार।

बिछाती थी सपनों के जाल
तुम्हारी वह करुणा की कोर,
गई वह अधरों की मुस्कान
मुझे मधुमय पीड़ा में बोर;

भूलती थी मैं सीखे राग
बिछलते थे कर बारम्बार,
तुम्हें तब आता था करुणेश !
उन्हीं मेरी भूलों पर प्यार !

गए तब से कितने युग बीत
हुए कितने दीपक निर्वाण !
नहीं पर मैंने पाया सीख
तुम्हारा सा मनमोहन गान।

× × ×

नहीं अब गाया जाता देव !
थकी अँगुली, हैं ढीले तार
विश्ववीणा में अपनी आज
मिला लो यह अस्फुट झंकार !

१९२८ मई

मिलन

रजतकरों की मृदुल तूलिका-
से ले तुहिनबिन्दु सुकुमार,
कलियों पर जब आँक रहा था
करुण कथा अपनी संसार;

तरल हृदय की उच्छ्वासें जब
भोले मेघ लुटा जाते,
अन्धकार दिन की चोटों पर
अञ्जन बरसाने आते।

मधु की बूँदों में छलके जब
तारक लोकों के शुचि फूल,
विधुर हृदय की मृदु कम्पन सा
सिहर उठा वह नीरव कूल;

मूक प्रणय से, मधुर व्यथा से;
स्वप्नलोक के से आह्वान,
वे आये चुपचाप सुनाने
तब मधुमय मुरली की तान।

चल चितवन के दूत सुना
उनके, पल में रहस्य की बात,
मेरे निर्निमेष पलकों में
मचा गए क्या क्या उत्पात !

जीवन है उन्माद तभी से
निधियाँ प्राणों के छाले,
माँग रहा है विपुल वेदना-
के मन प्याले पर प्याले !

पीड़ा का साम्राज्य बस गया
उस दिन दूर क्षितिज के पार,
मिटना था निर्वाण जहाँ
नीरव रोदन था पहरेदार !

× × ×

कैसे कहती हो सपना है
अलि! उस मूक मिलन की बात ?
भरे हुए अबतक फूलों में
मेरे आँसू उनके हास !

१६२६ अप्रैल

अतिथि से

वनबाला के गीतों सा
निर्जन में बिखरा है मधुमास,
इन कुञ्जों में खोज रहा है
सूना कोना मन्द बतास।

नीरव नभ के नयनों पर
हिलती हैं रजनी की अलकें,
जाने किसका पथ देखती
बिछकर फूलों की पलकें!

मधुर चाँदनी धो जाती है
खाली कलियों के प्याले,
बिखरे से हैं तार आज
मेरी वीणा के मतवाले;

पहली सी झङ्कार नहीं है
और नहीं वह मादक राग,
अतिथि! किन्तु सुनते जाओ
टूटे तारों का करुण विहाग!

१९२१ मई

मिटने का खेल

मैं अनन्त पथ में लिखती जो
सस्मित सपनों की बातें,
उनको कभी न धो पायेंगी
अपने आँसू से रातें!

उड़ उड़ कर जो धूल करेगी
मेघों का नभ में अभिषेक,
अमिट रहेगी उसके अञ्चल—
में मेरी पीड़ा की रेख।

तारों में प्रतिबिम्बित हो
मुस्कायेंगी अनन्त आँखें,
होकर सीमाहीन, शून्य में
मंडरायेंगी अभिलाषें।

वीणा होगी मूक बजाने—
वाला होगा अन्तर्धान,
विस्मृति के चरणों पर आकर
लौटेंगे सौ सौ निर्वाण!

जब असीम से हो जायेगा
मेरी लघु सीमा का मेल,
देखोगे तुम देव! अमरता
खेलेगी मिटने का खेल!

१९२९ मई

संसार

निश्वासों का नीड़, निशा का
बन जाता जब शयनागार,
लुट जाते अभिराम छिन्न
मुक्तावलियों के बन्दनवार

तब बुझते तारों के नीरव नयनों का यह हाहाकार,
आँसू से लिख लिख जाता है 'कितना अस्थिर है संसार'!

हँस देता जब प्रात, सुनहरे
अञ्चल में बिखरा रोली,
लहरों की बिछलन पर जब
मचली पड़ती किरणें भोली,

तब कलियाँ चुपचाप उठाकर पल्लव के घूँघट सुकुमार,
छलकी पलकों से कहती है 'कितना मादक है संसार!

देकर सौरभ दान पवन से
कहते जब मुरझाये फूल,
'जिसके पथ में बिछे वही
क्यों भरता इन आँखों में धूल ?'

'अब इनमें क्या सार' मधुर जब गाती भौंरों की गुञ्जार,
मर्मर का रोदन कहता है 'कितना निष्ठुर है संसार !'

स्वर्ण वर्ण से दिन लिख जाता
जब अपने जीवन की हार,
गोधूली, नभ के आँगन में
देती अगणित दीपक बार,

हँसकर तब उस पार तिमिर का कहता बढ़ बढ़ पारावार,
'बीते युग, पर बना हुआ है अब तक मतवाला संसार !'

स्वप्नलोक के फूलों से कर
अपने जीवन का निर्माण,
'अमर हमारा राज्य' सोचते
हैं जब मेरे पागल प्राण,

आकर तब अज्ञात देश से जाने किसकी मृदु झङ्कार,
गा जाती है करुण स्वरों में 'कितना पागल है संसार !'

१९२६ मई

अधिकार

वे मुस्काते फूल, नहीं—
जिनको आता है मुरझाना,
वे तारों के दीप, नहीं—
जिनको भाता है बुझ जाना;

वे नीलम के मेघ, नहीं—
जिनको है घुल जाने की चाह,
वह अनन्त ऋतुराज, नहीं—
जिसने देखी जाने की राह।

वे सूने से नयन, नहीं—
जिनमें बनते आँसू-मोती,
वह प्राणों की सेज, नहीं
जिसमें बेसुध पीड़ा सोती;

ऐसा तेरा लोक, वेदना
नहीं, नहीं जिसमें अवसाद,
जलना जाना नहीं, नहीं—
जिसने जाना मिटने का स्वाद!

× × ×

क्या अमरों का लोक मिलेगा
तेरी करुणा का उपहार?
रहने दो हे देव! अरे
यह मेरा मिटने का अधिकार!

१९२१ मई

कौन ?

ढुलकते आँसू सा सुकुमार
बिखरते सपनों सा अज्ञात,
चुरा कर ऊषा का सिन्दूर
मुस्कराया जब मेरा प्रात,

छिपा कर लाली में चुपचाप
सुनहला प्याला लाया कौन ?

× × ×

हँस उठे छूकर टूटे तार
प्राण में मँडराया उन्माद,
व्यथा मीठी ले प्यारी प्यास
सो गया बेसुध अन्तर्नाद,

घूट में थी साकी की साध
सुना फिर फिर जाता है कौन ?

१९२६ जुलाई

मेरा राज्य

रजनी ओढ़े जाती थी
झिलमिल तारों की जाली,
उसके बिखरे वैभव पर
जब रोती थी उजियाली;

शशि को छूने मचली सी
लहरों का कर कर चुम्बन,
बेसुध तम की छाया का
तटनी करती आलिङ्गन।

अपनी जब करुण कहानी
कह जाता है मलयानिल,
आँसू से भर जाता जब—
सूखा अवनी का अञ्चल ;

पल्लव के डाल हिंडोले
सौरभ सोता कलियों में,
छिप छिप किरणें आती जब
मधु से सींची गलियों में।

आँखों में रात बिता जब
विधु ने पीला मुख फेरा,
आया फिर चित्र बनाने
प्राची में प्रात चितेरा;

कन कन में जब छायी थी
वह नवयौवन की लाली,
मैं निर्धन तब आयी ले,
सपनों से भर कर डाली।

जिन चरणों की नख आभा—
ने हीरकजाल लजाये,
उन पर मैंने धुँधले से
आँसू दो चार चढ़ाये!

इन ललचाई पलकों पर
पहरा जब था व्रीड़ा का,
साम्राज्य मुझे दे डाला
उस चितवन ने पीड़ा का!!

उस सोने के सपने को
देखे कितने युग बीते!
आँखों के कोष हुए हैं
मोती बरसा कर रीते;

अपने इस सूनेपन की
मै हूँ रानी मतवाली,
प्राणों का दीप जला कर
करती रहती दीवाली।

मेरी आहें सोती हैं
इन ओठों की ओटों में,
मेरा सर्वस्व छिपा है
इन दीवानी चोटों में!

चिन्ता क्या है, हे निर्मम!
बुझ जाये दीपक मेरा;
हो जायेगा तेरा ही
पीड़ा का राज्य अँधेरा!

१६२८ जुलाई

चाह

चाहता है यह पागल प्यार,
अनोखा एक नया संसार!

कलियों के उच्छ्वास शून्य में ताने एक वितान,
तुहिनकणों पर मृदु कम्पन से सेज बिछा दें गान;

जहाँ सपने हों पहरेदार,
अनोखा एक नया संसार!

करते हों आलोक जहाँ बुझ बुझ कर कोमल प्राण,
जलने में विश्राम जहाँ मिटने में हों निर्वाण;

वेदना मधुमदिरा की धार,
अनोखा एक नया संसार!

मिल जावे उस पार क्षितिज के सीमा सीमाहीन,
गर्वीले नक्षत्र धरा पर लोटें होकर दीन!

उदधि हो नभ का शयनागार,
अनोखा एक नया संसार!

जीवन की अनुभूति तुला पर अरमानों से तोल,
यह अबोध मन मूक व्यथा से ले पागलपन मोल!

करें दृग आँसू का व्यापार,
अनोखा एक नया संसार!

१९२९ जुलाई

सूनापन

मिल जाता काले अंजन में
सन्ध्या की आँखों का राग,
जब तारे फैला फैला कर
सूने में गिनता आकाश;

उसकी खोई सी चाहों में
घुट कर मूक हुई आहों में !

झूम झूम कर मतवाली सी
पिये वेदनाओं का प्याला,
प्राणों में रूँधी निश्वासें
आती ले मेघों की माला;

उसके रह रह कर रोने में
मिल कर विद्युत के खोने में !

धीरे से सूने आँगन में
फैला जब जाती हैं रातें,
भर भरके ठंढी साँसों में
मोती से आँसू की पातें

उनकी सिहराई कम्पन में
किरणों के प्यासे चुम्बन में !

जाने किस बीते जीवन का
संदेशा दे मंद समीरण,
छू देता अपने पंखों से
मुर्झाये फूलों के लोचन;

उनके फीके मुस्काने में
फिर अलसाकर गिर जाने में !

आँखों की नीरव भिक्षा में
आँसू के मिटते दागों में,
ओठों की हँसती पीड़ा में
आहों के बिखरे त्यागों मे,

कन कन में बिखरा है निर्मम !
मेरे मानस का सूनापन !

१९२१ सितम्बर

सन्देह

बहती जिस नक्षत्रलोक में
निद्रा के श्वासों से वात,
रजतरश्मियों के तारों पर
बेसुध सी गाती थी रात !

अलसाती थीं लहरें पी कर
मधुमिश्रित तारों की ओस,
भरती थीं सपने गिन गिन कर
मूक व्यथाएँ अपने कोष।

दूर उन्हीं नीलमकूलों पर
पीड़ा का ले झीना तार,
उच्छ्वासों की गूँथी माला
मैंने पायी थी उपहार।

यह विस्मृति है या सपना वह
या जीवन-विनिमय की भूल !
काले क्यों पड़ते जाते हैं
माला के सोने से फूल ?

१९२९ जनवरी

निर्वाण

घायल मन लेकर सो जाती
मेघों में तारों की प्यास,
यह जीवन का ज्वार शून्य का
करता है बढ़ कर उपहास।

चल चपला के दीप जलाकर
किसे ढूँढता अन्धाकार?
अपने आँसू आज पिलादो
कहता किन से पारावार?

झुक झुक झूम झूम कर लहरें
भरती बूदों के मोती;
यह मेरे सपनों की छाया
झोकों में फिरती रोती;

आज किसी के मसले तारों
की वह दूरागत झङ्कार,
मुझे बुलाती है सहमी सी
झञ्झा के परदों के पार।

इस असीम तम में मिलकर
मुझको पल भर सो जाने दो,
बुझ जाने दो देव! आज
मेरा दीपक बुझ जाने दो!

१६२६ मई

समाधि के दीप से

जिन नयनों की विपुल नीलिमा
में मिलता नभ का आभास,
जिनका सीमित उर करता था
सीमाहीनों का उपहास;

जिस मानस में डूब गए—
कितनी करुणा कितने तूफ़ान!
लोट रहा है आज धूल में
उन मतवालों का अभिमान।

जिन अधरों की मन्द हँसी थी
नव अरुणोदय का उपमान,
किया दैव ने जिन प्राणों का
केवल सुषमा से निर्माण;

तुहिनबिन्दु सा, मञ्जु सुमन सा
जिन का जीवन था सुकुमार,
दिया उन्हें भी निठुर काल ने
पाषाणों का शयनागार।

× × ×

कन कन में बिखरी सोती है,
अब उनके जीवन की प्यास,
जगा न दे हे दीप! कहीं—
उसको तेरा यह क्षीण प्रकाश!

अभिमान

छाया की आँखमिचौनी
मेघों का मतवालापन,
रजनी के श्यामकपोलों
पर ढरकीले श्रम के कन;

फूलों की मीठी चितवन
नभ की ये दीपावलियाँ,
पीले मुख पर सन्ध्या के
वे किरणों की फुलझड़ियाँ।

विधु की चाँदी की थाली
मादक मकरन्द भरी सी,
जिस में उजियारी रातें
लुटतीं घुलतीं मिसरी सीं;

भिक्षुक से फिर जाओगे
जब लेकर यह अपना धन,
करुणामय तब समझोगे
इन प्राणों का मंहगापन!

क्यों आज दिये देते हो
अपना मरकत सिंहासन!
यह है मेरे मरु मानस-
का चमकीला सिकताकन।

आलोक यहाँ लुटता है
बुझ जाते हैं तारा गण,
अविराम जला करता है
पर मेरा दीपक सा मन !

जिसकी विशाल छाया में
जग बालक सा सोता है,
मेरी आँखों में वह दुख
आँसू बन कर खोता है !

जग हँसकर कह देता है
मेरी आँखें हैं निर्धन,
इनके बरसाये मोती
क्या वह अबतक पाया गिन ?

मेरी लघुता पर आती
जिस दिव्यलोक को व्रीड़ा,
उसके प्राणों से पूछो
वे पाल सकेंगे पीड़ा ?

उनसे कैसे छोटा है
मेरा यह भिक्षुक जीवन ?
उनमें अनन्त करुणा है
इसमें असीम सूनापन !

१६२६ जनवरी

उस पार

घोरतम छाया चारों ओर
घटाएँ घिर आईं घनघोर;
वेग मारुत का है प्रतिकूल
हिले जाते हैं पर्वतमूल ;
गरजता सागर बारम्बार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

तरङ्गें उठीं पर्वताकार
भयंकर करतीं हाहाकार,
अरे उनके फेनिल उच्छ्वास
तरी का करते हैं उपहास ;
हाथ से गई छूट पतवार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

ग्रास करने नौका, स्वच्छन्द
घूमते फिरते जलचर वृन्द ;
देख कर काला सिन्धु अनन्त
हो गया हा साहस का अन्त !
तरङ्गें हैं उत्ताल अपार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

बुझ गया वह नक्षत्र प्रकाश
चमकती जिसमें मेरी आश ;
रैन बोली सज कृष्ण दुकूल
'विसर्जन करो मनोरथ फूल ;
न लाये कोई कर्णाधार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?'

नीहार

सुना था मैंने इसके पार
बसा है सोने का संसार,
जहाँ के हँसते विहग ललाम
मृत्यु छाया का सुनकर नाम !
धरा का है अनन्त शृंगार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

जहाँ के निर्झर नीरव गान
सुना करते अमरत्व प्रदान ;
सुनाता नभ अनन्त झङ्कार
बजा देता है सारे तार ;
भरा जिसमें असीम सा प्यार,
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

पुष्प में है अनन्त मुस्कान
त्याग का है मारुत में गान ;
सभी में है स्वर्गीय विकाश
वही कोमल कमनीय प्रकाश ;
दूर कितना है वह संसार !
कौन पहुँचा देगा उस पार ?

× × ×

सुनायी किराने पल में आन
कान में मधुमय मोहक तान
'तरी को ले जाओ मँझधार
डूब कर हो जाओगे पार ;
विसर्जन ही है कर्णाधार,
वही पहुँचा देगा उस पार ।'

१९२४ जुलाई

मेरी साध

थकी पलकें सपनों पर डाल
व्यथा में सोता हो आकाश,
छलकता जाता हो चुपचाप
बादलों के उर से अवसाद;

वेदना की वीणा पर देव
शून्य गाता हो नीरव राग,
मिलाकर निश्वासों के तार
गूँथती हो जब तारे रात;

उन्हीं तारक फूलों में देव
गूँथना मेरे पागल प्राण—
हठीले मेरे छोटे प्राण!

किसी जीवन की मीठी याद
लुटाता हो मतवाला प्रात,
कली अलसाई आँखें खोल
सुनाती हों सपने की बात;

खोजते हों खोया उन्माद
मन्द मलयानिल के उच्छ्वास,
माँगती हो आँसू के बिन्दु
मूक फूलों की सोती प्यास;

पिला देना धीरे से देव
उसे मेरे आँसू सुकुमार—
सजीले ये आँसू के हार!

नीहार

मचलते उद्‌गारों से खेल
उलझते हों किरणों के जाल,
किसी की छूकर ठंढी सांस
सिहर जाती हों लहरें बाल ;

चकित सा सूने में संसार
गिन रहा हो प्राणों के दाग़,
सुनहली प्याली में दिनमान
किसी का पीता हो अनुराग ;

ढाल देना उसमें अनजान
देव मेरा चिर संचित राग—
अरे यह मेरा मादक राग !

मत्त हो स्वप्निल हाला ढाल
महानिद्रा में पारावार,
उसी की धड़कन में तूफ़ान
मिलाता हो अपनी झंकार ;

झकोरों से मोहक संदेश
कह रहा हो छाया का मौन,
सुप्त आहों का दीन विषाद
पूछता हो आता है कौन ?

बहा देना आकर चुपचाप
तभी यह मेरा जीवन फूल—
सुभग मेरा मुरझाया फूल !

१९२६ जनवरी

स्वप्न

इन हीरक से तारों को
कर चूर बनाया प्याला
पीड़ा का सार मिलाकर
प्राणों का आसव ढाला।

मलयानिल के झोंकों में
अपना उपहार लपेटे,
मैं सूने तट पर आई
बिखरे उद्गार समेटे।

काले रजनी अंचल में
लिपटी लहरें सोती थीं,
मधु मानस का बरसाती
वारिधिमाला रोती थी।

नीरव तम की छाया में
छिप सौरभ की अलकों में,
गायक वह गान तुम्हारा
आ मंडराया पलकों में।

नीहार

हाला सी, हलाहल सी,
बह गई अचानक लहरी,
डूबा जग भूला तन मन
आँखें शिथिलाईं सिहरी।

बेसुध से प्राण हुए जब
छूकर उन झङ्कारों को,
उड़ते थे, अकुलाते थे
चुम्बन करने तारों को!

उस मतवाली वीणा से
जब मानस था मतवाला,
वे मूक हुईं झङ्कारें
वह चूर हो गया प्याला!

हो गईं कहाँ अन्तर्हित
सपने ले कर वे रातें?
जिनका पथ आलोकित कर
बुझने जाती हैं आँखें!

१६२८ मई

आना

जो मुखरित कर जाती थी
मेरा नीरव आवाहन,
मैंने दुर्बल प्राणों की
वह आज सुला दी कम्पन !

थिरकन अपनी पुतली की
भारी पलकों में बाँधी,
निस्पन्द पड़ी है आँखें
बरसाने वाली आँधी।

जिसके निष्फल जीवन ने
जल जल कर देखी राहें !
निर्वाण हुआ है देखो
वह दीप लुटा कर चाहें !

निर्घोष घटाओं में छिप
तड़पन चपला की सोती,
झंझा के उन्मादों में
घुलती जाती बेहोशी।

करुणामय को भाता है
तम के परदों में आना,
हे नभ की दीपावलियों !
तुम पल भर को बुझ जाना !

फरवरी १९२९

निश्चय

कितनी रातों की मने
नहलायी है अँधियारी,
धो डाली है संध्या के
पीले सेंदुर से लाली;

नभ के धुँधले कर डाले
अपलक चमकीले तारे,
इन आहों पर तैरा कर
रजनीकर पार उतारे।

बह गई क्षितिज की रेखा
मिलती है कहीं न हेरे,
भूला सा मत्त समीरण
पागल सा देता फेरे!

अपने उर पर सोने से
लिखकर कुछ प्रेम कहानी,
सहते हैं रोते बादल
तूफानों की मनमानी।

नीहार

इन बूँदों के दर्पण में
करुणा क्या झाँक रही है ?
क्या सागर की धड़कन में
लहरें बढ़ आँक रहीं हैं ?

पीड़ा मेरे मानस से
भीगे पट सी लिपटी है,
डूबी सी यह निश्वासें
ओठों मे आ सिमटी हैं।

मुझमें विक्षिप्त झकोरे !
उन्माद मिला दो अपना,
हाँ नाच उठे जिसको छू
मेरा नन्हा सा सपना !!

पीड़ा टकरा कर फूटे
घूमे विश्राम विकल सा,
तम बढ़े मिटा डाले सब
जीवन काँपे दलदल सा।

फिर भी इस पार न आवे
जो मेरा नाविक निर्मम,
सपनों से बाँध डुबाना
मेरा छोटा सा जीवन !

सितम्बर १९२८

अनुरोध

इसमें अतीत सुलझाता
अपने आँसू की लड़ियाँ
इसमें असीम गिनता है
वे मधुमासों की घड़ियाँ;

इस अञ्चल में चित्रित हैं
भूलीं जीवन की हारें
उनकी छलनामय छाया
मेरी अनन्त मनुहारें।

वे निर्धन के दीपक सी,
बुझती सीं मूक व्यथाएँ,
प्राणों की चित्रपटी में
आँकी सी करुण कथाएँ,

मेरे अनन्त जीवन का
वह मतवाला बालकपन,
इसमें थक कर सोता है
लेकर अपना अञ्चल मन।

× × ×

ठहरो बेसुध पीड़ा को
मेरी न कहीं छू लेना!
जबतक वे आ न जगावें
बस सोती रहने देना!!

मई १९२९

तब

शून्य से टकरा कर सुकुमार
करेगी पीड़ा हाहाकार,
बिखर कर कन कन में हो व्याप्त
मेघ बन छा लेगी संसार !

पिघलते होंगे यह नक्षत्र
अनिल की जब छूकर निश्वास,
निशा के आँसू में प्रतिबिम्ब
देख निज काँपेगा आकाश !

विश्व होगा पीड़ा का राग,
निराशा जब होगी वरदान,
साथ लेकर मुर्झाई साध
बिखर जायेंगे प्यासे प्राण !

उदधि नभ को कर लेगा प्यार
मिलेंगे सीमा और अनन्त,
उपासक ही होगा आराध्य
एक होंगे पतझार वसन्त।

बुझेगा जलकर आशादीप
सुला देगा आकर उन्माद,
कहाँ कब देखा था वह देश?
अतल में डूबेगी यह याद!

प्रतीक्षा में मतवाले नैन
उड़ेंगे जब सौरभ के साथ,
हृदय होगा नीरव आह्वान
मिलोगे क्या तब हे अज्ञात?

१९२८ जनवरी

मुर्झाया फूल

था कली के रूप शैशव—
में अहो सूखे सुमन !
मुस्कराता था, खिलाती
अंक में तुझको पवन।

खिल गया जब पूर्ण तू—
मंजुल सुकोमल पुष्पवर !
लुब्ध मधु के हेतु मँडराते
लगे आने भ्रमर।

स्निग्ध किरणें चन्द्र की—
तुझको हँसाती थीं सदा,
रात तुझ पर वारती थी
मोतियों की सम्पदा।

लोरियाँ गाकर मधुप
निद्रा विवश करते तुझे
यत्न माली का रहा—
आनन्द से भरता तुझे।

कर रहा अठखेलियाँ—
इतरा सदा उद्यान में,
अन्त का यह दृश्य आया—
था कभी क्या ध्यान में ?

सो रहा अब तू धरा पर—
शुष्क बिखराया हुआ,
गन्ध कोमलता नहीं
मुख मंजु मुरझाया हुआ।

आज तुझको देखकर
चाहक भ्रमर घाता नहीं,
लाल अपना राग तुझ पर
प्रात बरसाता नहीं।

जिस पवन ने अङ्क में—
ले प्यार था तुझको किया,
तीव्र झोंके से सुला—
उसने तुझे भू पर दिया

कर दिया मधु और सौरभ
दान सारा एक दिन,
किन्तु रोता कौन है
तेरे लिए दानी सुमन ?

मत व्यथित हो फूल ! किसको
सुख दिया संसार ने ?
स्वार्थमय सबको बनाया—
है यहाँ करतार ने ।

विश्व में हे फूल ! तू—
सबके हृदय भाता रहा !
दान कर सर्वस्व फिर भी—
हाय हर्षाता रहा !

जब न तेरी ही दशा पर
दुख हुआ संसार को,
कौन रोयेगा सुमन !
हमसे मनुज निःसार को ?

१९२३ जनवरी

कहाँ ?

घोर घन की अवगुण्ठन डाल
करुण सा क्या गाती है रात ?
दूर छूटा वह परिचित कूल
कह रहा है यह झंझावात,

लिये जाते तरणी किस ओर
अरे मेरे नाविक नादान !

हो गया विस्मृत मानवलोक
हुए जाते हैं वेसुध प्राण,
किन्तु तेरा नीरव संगीत
निरन्तर करता है अह्वान;

यही क्या है अनन्त की राह
अरे मेरे नाविक नादान !

१६२६ मार्च

उत्तर

इस एक बूँद आँसू में
चाहे साम्राज्य बहा दो,
वरदानों की वर्षा से
यह सूनापन बिखरा दो;

इच्छाओं की कम्पन से
सोता एकान्त जगा दो,
आशा की मुस्काहट पर
मेरा नैराश्य लुटा दो।

चाहे जर्जर तारों में
अपना मानस उलझा दो,
इन पलकों के प्यालों में
सुरा का आसव छलका दो;

मेरे बिखरे प्राणों में
सारी करुणा ढुलका दो,
मेरी छोटी सीमा में
अपना अस्तित्व मिटा दो!

पर शेष नहीं होगी यह
मेरे प्राणों की क्रीड़ा,
तुमको पीड़ा में ढूँढा
तुम में ढूँढूँगी पीड़ा!

१९२९ फरवरी

फिर एक बार

मैं कम्पन हूँ तू करुण राग
मैं आँसू हूँ तू है विषाद,
मैं मदिरा तू उसका खुमार
मैं छाया तू उसका अधार;

मेरे भारत मेरे विशाल
मुझको कह लेने दो उदार !
फिर एक बार बस एक बार !

जिनसे कहती बीती बहार
'मतवाली जीवन है असार' !
जिन झंकारों के मधुर गान
ले गया छीन कोई अजान,

उन तारों पर बनकर विहाग
मंडरा लेने दो हे उदार !
फिर एक बार बस एक बार !

कहता है जिनका व्यथित मौन
'हमसा निष्फल है आज कौन'?
निर्धन के धन सी हास रेख
जिनकी जग ने पायी न देख,

उन सूखे ओठों के विषाद—
में मिल जाने दो हे उदार !
फिर एक बार बस एक बार !

जिन आँखों का नीरव अतीत
कहता 'मिटना है मधुर जीत';
जिन पलकों में तारे अमोल
आँसू से करते हैं किलोल,

उस चिन्तित चितवन में विहास
बन जाने दो मुझको उदार !
फिर एक बार बस एक बार !

फूलों सी हो पल में मलीन
तारों सी सूने में विलीन,
ढुलती बूँदों से ले विराग
दीपक से जलने का सुहाग;

अन्तरतम की छाया समेट
मैं तुझमें मिट जाऊँ उदार !
फिर एक बार बस एक बार !

१६२६ मई

उनका प्यार

समीरण के पंखों में गूँथ
लुटा डाला सौरभ का भार,
दिया, ढुलका मानस मकरन्द
मधुर अपनी स्मृति का उपहार;
अचानक हो क्यों छिन्न मलीन
लिया फूलों का जीवन छीन!

दैव सा निष्ठुर, दुःख सा मूक
स्वप्न सा, छाया सा अनजान,
वेदना सा, तम सा गम्भीर
कहाँ से आया वह अह्वान?
हमारी हँसती चाह समेट
ले गया कौन तुम्हें किस देश?

छोड़ कर जो वीणा के तार
शून्य में लय हो जाता राग,
विश्व छा लेती छोटी आह
प्राण का बन्दीखाना त्याग;
नहीं जिसका सीमा में अन्त
मिली है क्या वह साध अनन्त?

ज्योति बुझ गई रह गया दीप
रही झङ्कार गया वह गान,
विरह है या अखण्ड संयोग
शाप है या यह है वरदान ?

पूछता आकर हाहाकार
कहाँ हो ? जीवन के उस पार ?

मधुर जीवन था मुग्ध वसन्त
विधुर बनकर आती क्यों याद ?
'सुधा' वसुधा में लाया एक
प्राण में लाती एक विषाद;

बुझाकर छोटा दीपालोक
हुई क्या हो असीम में लोप ?

हुई सोने की प्रतिमा क्षार
साधनाएँ बैठी हैं मौन,
हमारा मानसकुञ्ज उजाड़
दे गया नीरव रोदन कौन ?

नहीं क्या अब होगा स्वीकार
पिघलती आँखों का उपहार ?

बिखरते स्वप्नों की तस्वीर
अधूरा प्राणों का सन्देश,
हृदय की लेकर प्यासी साध
बसाया है अब कौन विदेश ?

रो रहा है चरणों के पास
चाह जिनकी थी उनका प्यार।

१९२८ मई

आँसू

यहीं है वह विस्मृत सङ्गीत
खो गई है जिसकी झङ्कार,
यहीं सोते हैं वे उच्छ्वास
जहाँ रोता बीता संसार;

यहीं है प्राणों का इतिहास
यहीं बिखरे वसन्त का शेष,
नहीं जो अब आयेगा लौट
यहीं उसका अक्षय संदेश।

× × ×

समाहित है अनन्त आह्वान
यहीं मेरे जीवन का सार,
अतिथि! क्या ले जाओगे साथ
मुग्ध मेरे आँसू दो चार!

१६२८ अप्रैल

मेरा एकान्त

कामना की पलकों में भूल
नवल फूलों के छूकर अङ्ग,
लिए मतवाला सौरभ साथ
लजीली लतिकाएं भर अङ्क,
यहाँ मत आओ मत्त समीर !
सो रहा है मेरा एकान्त !

लालसा की मदिरा में चूर
क्षणिक भंगुर यौवन पर भूल,
साथ लेकर भौरों की भीर
विलासी हे उपवन के फूल !
बनाओ इसे न लीलाभूमि
तपोवन है मेरा एकान्त !

निराली कल कल में अभिराम
मिलाकर मोहक मादक गान,
छलकती लहरों में उद्दाम
छिपा अपना अस्फुट आह्वान;
न कर हे निर्झर ! भङ्ग समाधि
साधना है मेरा एकान्त !

विजन वन में बिखरा कर राग
जगा सोते प्राणों की प्यास,
ढालकर सौरभ में उन्माद
नशीली फैलाकर निश्वास;
लुभाओ इसे न मुग्ध वसन्त !
विरागी है मेरा एकान्त !

गुलाबी चल चितवन में बोर
सजीले सपनों की मुस्कान,
झिलमिलाती अवगुण्ठन डाल
सुनाकर परिचित भूली तान,
जला मत अपना दीपक आश !
न खो जाये मेरा एकान्त !

१९२७ अगस्त

उनसे

निराशा के झोकों ने देव !
भरी मानस कुंजों में धूल,
वेदनाओं के झंझावात
गए बिखरा यह जीवन फूल।

बरसते थे मोती अवदात
जहाँ तारकलोकों से टूट,
जहाँ छिप जाते थे मधुमास
निशा के अभिसारों को लूट।

जला जिसमें आशा के दीप
तुम्हारी करती थी मनुहार,
हुआ वह उच्छ्वासों का नीड़
रुदन का सूना स्वप्नागार।

× × ×

हृदय पर अङ्कित कर सुकुमार
तुम्हारी अवहेला की चोट;
बिछाती हूँ पथ में करुणेश !
छलकती आँखें हँसते ओठ।

मई १६२६

मेरा जीवन

स्वर्ग का था नीरव उच्छ्वास
देव-वीणा का टूटा तार,
मृत्यु का क्षणभंगुर उपहार
रत्न वह प्राणों का शृङ्गार;
नयी आशाओं का उपवन
मधुर वह था मेरा जीवन!

क्षीरनिधि की थी सुप्त तरंग
सरलता का न्यारा निर्झर
हमारा वह सोने का स्वप्न
प्रेम की चमकीली आकर;
शुभ्र जो था निर्मेघ गगन
सुभग मेरा संगी जीवन!

तुम्हें ठुकरा जाता नैराश्य
हँसा जाती है तुमको आश,
नचाता मायावी संसार
लुभा जाता सपनों का हास;
मानते विष को संजीवन
मुग्ध मेरे भूले जीवन!

न रहता भौंरों का आह्वान
नहीं रहता फूलों का राज्य,
कोकिला होती अन्तर्धान
चला जाता प्यारा ऋतुराज;
असम्भव है चिर सम्मेलन,
न भूलो क्षणभंगुर जीवन!

विकसते मुरझाने को फूल
उदय होता छिपने को चन्द,
शून्य होने को भरते मेघ
दीप जलता होने को मन्द;
यहाँ किसका अनन्त यौवन?
अरे अस्थिर छोटे जीवन!

छलकती जाती है दिन रैन
लबालब तेरी प्याली मीत,
ज्योति होती जाती है क्षीण
मौन होता जाता संगीत;
करो नयनों का उन्मीलन
क्षणिक हे मतवाले जीवन!

शून्य से बन जाओ गम्भीर
त्याग की हो जाओ झङ्कार,
इसी छोटे प्याले में आज
डुबा डालो सारा संसार;
लजा जायें यह मुग्ध सुमन
बनो ऐसे छोटे जीवन!

सखे! यह माया का देश
क्षणिक है मेरा तेरा सङ्ग,
यहाँ मिलता काँटों में बन्धु!
सजीला सा फूलों का रङ्ग,
तुम्हें करना विच्छेद सहन
न भूलो हे प्यारे जीवन!

१९२७ फरवरी

सूना संदेश

हुए हैं कितने अन्तर्धान
छिन्न होकर भावों के हार,
घिरे घन से कितने उच्छ्वास
उड़े हैं नभ में होकर क्षार

शून्य को छूकर आये लौट
मूक होकर मेरे निश्वास,
बिखरती है पीड़ा के साथ
चूर होकर मेरी अभिलाष !

छा रही है बनकर उन्माद
कभी जो थी अस्फुट झंकार,
काँपता सा आँसू का बिन्दु
बना जाता है पारावार।

खोज जिसकी वह है अज्ञात
शून्य वह है भेजा जिस देश,
लिए जाओ अनन्त के पार
प्राण वाहक सूना संदेश !

१९२८ मार्च

प्रतीक्षा

जिस दिन नीरव तारों से,
बोलीं किरणों की अलकें,
'सो जाओ अलसाई हैं
सुकुमार तुम्हारी पलकें!'

जब इन फूलों पर मधु की
पहली बूँदें बिखरी थीं,
आँखें पंकज की देखीं
रवि ने मनुहार भरी सी।

दीपकमय कर डाला जब
जलकर पतंग ने जीवन,
सीखा बालक मेघों ने
नभ के आँगन में रोदन;

उजियारी अवगुण्ठन में
विधु ने रजनी को देखा,
तब से मैं ढूँढ़ रही हूँ
उनके चरणों की रेखा।

मैं फूलों में रोती वे
बालारुण में मुस्काते,
मैं पथ में बिछ जाती हूँ
वे सौरभ में उड़ जाते।

वे कहते हैं उनको मैं
अपनी पुतली में देखूँ,
यह कौन बता जायेगा
किसमें पुतली को देखूँ?

मेरी पलकों पर रातें
बरसाकर मोती सारे,
कहतीं 'क्या देख रहे हैं
अविराम तुम्हारे तारे'?

तुमने इन पर अंजन से
बुन बुन कर चादर तानी,
इन पर प्रभात ने फेरा
आकर सोने का पानी!

इन पर सौरभ की साँसें
लुट लुट जातीं दीवानी,
यह पानी में बैठी है
बन स्वप्न लोक की रानी!

कितनी बीतीं पतझारें
कितने मधु के दिन आये,
मेरी मधुमय पीड़ा को
कोई पर ढूँढ़ न पाये!

झिप झिप आँखें कहती हैं
यह कैसी है अनहोनी ?
हम और नहीं खेलेंगी
उनसे यह आँख मिचौनी।

अपने जर्जर अञ्चल में
भरकर सपनों की माया,
इन थके हुए प्राणों पर
छाई विस्मृति की छाया।

× × ×

मेरे जीवन की जागृति !
देखो फिर भूल न जाना,
जो वे सपना बन आवें
तुम चिरनिद्रा बन जाना।

१९२९ अप्रैल

विस्मृति

जहाँ है निद्रामग्न वसन्त
तुम्हीं हो वह सूना उद्यान,
तुम्हीं हो नीरवता का राज्य
जहाँ खोया प्राणों ने गान;

निराली सी आँसू की बूँद
छिपा जिसमें असीम अवसाद,
हलाहल या मदिरा का घूँट
डुबा जिसने डाला उन्माद!

जहाँ बन्दी मुरझाया फूल
कली की हो ऐसी मुस्कान,
ओस कन का छोटा आकार
छिपा जो लेता है तूफान;

जहाँ रोता है मौन अतीत
सखी! तुम हो ऐसी झङ्कार,
जहाँ बनती आलोक समाधि
तुम्हीं हो ऐसा अन्धाकार,
जहाँ मानस के रत्न विलीन
तुम्हीं हो ऐसा पारावार,
अपरिचित हो जाता है मीत
तुम्हीं हो ऐसा अञ्जनसार।

मिटा देता आँसू के दाग़
तुम्हारा यह सोने सा रङ्ग,
डुबा देती बीता संसार
तुम्हारी यह निस्तब्ध तरङ्ग।

भस्म जिसमें हो जाता काल
तुम्हीं वह प्राणों का संन्यास
लेखनी हो ऐसी विपरीत
मिटा जो जाती है इतिहास;

साधनाओं का दे उपहार
तुम्हें पाया है मैंने अन्त,
लुटा अपना सीमित ऐश्वर्य
मिला है यह वैराग्य अनन्त।

× × ×

भुला डालो बीते की साध;
मिटा डालो बीते का लेश;
एक रहने देना यह ध्यान
क्षणिक है यह मेरा परदेश!

१९२७ फरवरी

मोल

झिलमिल तारों की पलकों में
स्वप्निल मुस्कानों को ढाल,
मधुर वेदनाओं से भर के
मेघों के छायामय थाल ;

रंग डाले अपनी लाली में
गूँथ नये ओसों के हार,
विजन विपिन में आज बावली
बिखराती हो क्यों शृङ्गार ?

फूलों के उच्छ्वास बिछाकर
फैला फैला स्वर्ण पराग,
विस्मृति सी तुम मादकता सी
गाती हो मदिरा सा राग ;

जीवन का मधु बेच रही हो
मतवाली आँखों में घोल
क्या लोगी ! क्या कहा सजनि
'इसका दुखिया आँसू है मोल' !

१९२९ जनवरी

गूँथ बिखरे सूखे अनुराग
बीन करके प्राणों के दान,
मिले रज में सपनों को ढूँढ
खोज कर वे भूले आह्वान;

अनोखे से माली निर्जीव
बनायी है आँसू की माल!

मिटा जिनको जाता है काल
अमिट करते हो उनकी याद,
डुबा देता जिसको तूफान
अमर कर देते हो वह साध;

मूक जो हो जाती है चाह
तुम्हीं उसका देते संदेश

राख में सोने का साम्राज्य
शून्य में रखते हो संगीत,
धूल से लिखते हो इतिहास
बिन्दु में भरते हो वारीश;

तुम्हीं में रहता मूक वसन्त
अरे सूखे फूलों के हास!

१६२७ नवम्बर

मोल

झिलमिल तारों की पलकों में
स्वप्निल मुस्कानों को ढाल,
मधुर वेदनाओं से भर के
मेघों के छायामय थाल ;

रंग डाले अपनी लाली में
गूँथ नये ओसों के हार,
विजन विपिन में आज बावली
बिखराती हो क्यों शृङ्गार ?

फूलों के उच्छ्वास बिछाकर
फैला फैला स्वर्ण पराग,
विस्मृति सी तुम मादकता सी
गाती हो मदिरा सा राग ;

जीवन का मधु बेच रही हो
मतवाली आँखों में घोल
क्या लोगी ! क्या कहा सजनि
'इसका दुखिया आँसू है मोल' !

१९२९ जनवरी

दीप

मूक करके मानस का ताप
सुलाकर यह सारा उन्माद,
जलाना प्राणों को चुपचाप
छिपाये रोता अन्तर्नाद ;
कहाँ सीखी यह अद्भुत प्रीति ?
मुग्ध हे मेरे छोटे दीप !

चुराया अन्तस्थल में भेद
नहीं तुमको वाणी की चाह,
भस्म होते जाते हैं प्राण
नहीं मुख पर आती है आह ;
मौन में सोता है सङ्गीत—
लजीले मेरे छोटे दीप !

क्षार होता जाता है गात
वेदनाओं का होता अन्त,
किन्तु करते रहते हो मौन
प्रतीक्षा का आलोकित पन्थ ;
सिखा दो ना नेही की रीति—
अनोखे मेरे नेही दीप !

पड़ी है पीड़ा संज्ञाहीन
साधना में डूबा उद्‌गार,
ज्वाल में बैठा हो निस्तब्ध
स्वर्ण बनता जाता है प्यार;
चिता है तेरी प्यारी मीत—
वियोगी मेरे बुझते दीप?

अनोखे से नेही के त्याग!
निराले पीड़ा के संसार!
कहाँ होते हो अन्तर्धान
लुटा अपना सोने सा प्यार?
कभी आयेगा ध्यान अतीत—
तुम्हें क्या निर्वाणोन्मुख दीप?

१९२७ नवम्बर

वरदान

तरल आँसू की लड़ियाँ गूँथ
इन्हीं ने काटी काली रात,
निराशा का सूना निर्माल्य
चढ़ाकर देखा फीका प्रात।

इन्हीं पलकों ने कंटक हीन
किया था वह मारग वेपीर,
जहाँ से छूकर तेरे अङ्ग
कभी आता था मंद समीर!

सजग लखतीं थीं तेरी राह
सुलाकर प्राणों में अवसाद;
पलक प्यालों से पी पी देव!
मधुर आसव सी तेरी याद।

अशन जल का जल ही परिधान
रचा था बूँदों में संसार
इन्हीं नीले तारों में मुग्ध
साधना सोती थी साकार

आज आये हो हे करुणेश!
इन्हें जो तुम देने वरदान,
गलाकर मेरे सारे अङ्ग
करो दो आँखों का निर्माण!

१६२८ दिसम्बर

स्मृति

विस्मृति तिमिर में दीप हो
भवितव्य का उपहार हो;
बीते हुए का स्वप्न हो
मानव हृदय का सार हो।

तुम सान्त्वना हो दैव की
तुम भाग्य का वरदान हो;
टूटी हुई झंकार हो
गत काल की मुस्कान हो

उस लोक का सदेश हो
इस लोक का इतिहास हो;
भूले हुए का चित्र हो
सोयी व्यथा का हास हो?

अस्थिर चपल संसार में
तुम हो प्रदर्शक संगिनी;
निस्सार मानस कोष में
हो मञ्जु हीरक की कनी।

दुर्दैव ने उर पर हमारे
चित्र जो अङ्कित किए;
देकर सजीला रंग तुमने
सर्वदा रञ्जित किए;

तुम हो सुधाधारा सदा
सूखे हुए अनुराग को;
तुम जन्म देती हो सखी!
आसक्ति को वैराग्य को।

तेरे बिना संसार में
मानव हृदय स्मशान है;
तेरे बिना है संगिनी!
अनुराग का क्या मान है?

१९२६ मई

याद

निठुर होकर डालेगा पीस
इसे अब सूनेपन का भार,
गला देगा पलकों में मूँद
इसे इन प्राणों का उद्गार;

खींच लेगा असीम के पार
इसे छलिया सपनों का हास,
बिखरते उच्छ्वासों के साथ
इसे बिखरा देगा नैराश्य।

सुनहरी आशाओं का छोर
बुलायेगा इसको अज्ञात,
किसी विस्मृत वीणा का राग
बना देगा इसको उद्भ्रान्त।

× × ×

छिपेगी प्राणों में बन प्यास
घुलेगी आँखों में हो राग,
कहाँ फिर ले जाऊँ हे देव!
तुम्हारे उपहारों की याद?

१९२९ जुलाई

नीरव भाषण

गिरा जब हो जाती है मूक
देख भावों का पारावार,
तोलते हैं जब बेसुध प्राण
शून्य से करुणकथा का भार;
मौन बन जाता आकर्षण
वहीं मिलता नीरव भाषण।

जहाँ बनती पतझार वसन्त
जहाँ जागृति बनती उन्माद,
जहाँ मदिरा देती चैतन्य
भूलना बनता मीठी याद;
जहाँ मानस का मुग्ध मिलन
वहीं मिलता नीरव भाषण।

जहाँ विष देता है अमरत्व
जहाँ पीड़ा है प्यारी मीत,
अश्रु हैं नयनों का शृङ्गार
जहाँ ज्वाला बनती नवनीत ;
मृत्यु बन जाती नवजीवन
वहीं रहता नीरव भाषण ।

नहीं जिसमें अनन्त विच्छेद
बुझा पाता जीवन की प्यास,
करुण नयनों का संचित मौन
सुनाता कुछ अतीत की बात;
प्रतीक्षा बन जाती अंजन
वहीं मिलता नीरव भाषण ।

पहन कर जब आँसू के हार
मुस्कराती वे पुतली श्याम,
प्राण में तन्मयता का हास
माँगता है पीड़ा अविराम;
वेदना बनती संजीवन
वहीं मिलता नीरव भाषण ।

जहाँ मिलता पंकज का प्यार
जहाँ नभ में रहता आराध्य,
ढाल देना प्राणों में प्राण
जहाँ होती जीवन की साध ;
मौन बन जाता आवाहन
वहीं रहता नीरव भाषण ।

जहाँ है भावों का विनिमय
जहाँ इच्छाओं का संयोग,
जहाँ सपनों में है अस्तित्व
कामनाओं में रहता योग;
महानिद्रा बनता जीवन
वहीं मिलता नीरव भाषण।

जहाँ आशा बनती नैराश्य
राग बन जाता है उच्छ्वास,
मधुर वीणा है अन्तर्नाद
तिमिर में मिलता दिव्य प्रकाश;
हास बन जाता है रोदन
वहीं मिलता नीरव भाषण।

१६२६

अनोखी भूल

जिन चरणों पर देव लुटाते—
थे अपने अमरों के लोक,
नखचन्द्रों की कान्ति लजाती
थी नक्षत्रों के आलोक;

रवि शशि जिन पर चढ़ा रहे
अपनी आभा अपना राज,
जिन चरणों पर लोट रहे थे
सारे सुख सुषमा के साज;

जिनकी रज धो धो जाता था
मेघों का मोती सा नीर,
जिनकी छवि अंकित कर लेता
नभ अपना अन्तस्थल चीर;

मैं भी भर भीने जीवन में
इच्छाओं के रुदन अपार,
जला वेदनाओं के दीपक
आयी उस मन्दिर के द्वार।

क्या देता मेरा सूनापन
उनके चरणों को उपहार ?
बेसुध सी मैं धर आयी
उन पर अपने जीवन की हार !

× × ×

मधुमाते हो विहँस रहे थे
जो नन्दन कानन के फूल,
हीरक बन कर चमक गई
उनके अञ्चल में मेरी भूल !

१६२६ मई

आँसू की माला

उच्छ्वासों की छाया में
पीड़ा के आलिंगन में,
निश्वासों के रोदन में
इच्छाओं के चुम्बन में।

सूने मानस मन्दिर में
सपनों की मुग्ध हँसी में
आशा के आवाहन में
बीते की चित्रपटी में।

उन थकी हुई सोती सी
ज्योतिष्ना की पलकों में,
बिखरी उलझी हिलती सी
मलयानिल की अलकों में;

रजनी के अभिसारों में
नक्षत्रों के पहरों में,
ऊषा के उपहासों में
मुस्काती सी लहरों में।

जो बिखर पड़े निर्जन में
निर्भर सपनों के मोती,
मैं ढूँढ़ रही थी लेकर
धुंधली जीवन की ज्योती;

उस सूने पथ में अपने
पैरों की चाप छिपाये,
मेरे नीरव मानस में
वे धीरे धीरे आये!

मेरी मदिरा मधुवाली
आकर सारी ढुलका दी,
हँसकर पीड़ा से भर दी
छोटी जीवन की प्याली;

मेरी बिखरी वीणा के
एकत्रित कर तारों को;
टूटे सुख के सपने दे
अब कहते हैं गाने को।

यह मुरझाये फूलों का
फीका सा मुस्काना है,
यह सोती सी पीड़ा को
सपनों से ठुकराना है;

गोधूली के ओठों पर
किरणों का बिखराना है
यह सूखी पंखड़ियों में
मारुत का इठलाना है।

× × ×

इस मीठी सी पीड़ा में
डूबा जीवन का प्याला
लिपटी सी उतराती है
केवल आँसू की माला!

१९२७ नवम्बर

उषा से छू आरक्त कपोल
किलक पड़ता तेरा उन्माद,
देख तारों के बुझते प्राण
न जाने क्या आ जाता याद ?
हेरती है सौरभ की हाट
कहां किस निर्मोही की बाट

चाँदनी का शृङ्गार समेट
अधखुली आँखों की यह कोर;
लुटा अपना यौवन अनमोल
ताकती किस अतीत की ओर ?
जानते हो यह अभिनव प्यार
किसी दिन होगा कारागार ?

कौन वह है सम्मोहन राग
खींच लाया तुमको सुकुमार ?
तुम्हें भेजा जिसने इस देश
कौन वह है निष्ठुर कर्तार ?
हँसो पहनो काँटों के हार
मधुर भोलेपन के संसार

१९२७ सितम्बर

फूल

मधुरिमा के, मधु के अवतार
सुधा से, सुषमा से छविमान,
आँसुओं में सहमे अभिराम
तारकों से हे मूक अजान!
सीखकर मुस्काने की बान
कहाँ आये हो कोमल प्राण?

स्निग्ध रजनी से लेकर हास
रूप से भर कर सारे अंग,
नये पल्लव का घूँघट डाल
अछूता ले अपना मकरन्द
ढूँढ़ पाया है यह देश?
स्वर्ग के हे मोहक सन्देश!

रजत किरणों से नैन पखार
अनोखा ले सौरभ का भार,
छलकता लेकर मधु का कोष
चले आये एकाकी पार;
कहो क्या आये मारग भूल?
मञ्जु छोटे मुस्काते फूल!

उषा से छू आरक्त कपोल
किलक पड़ता तेरा उन्माद,
देख तारों के बुझते प्राण
न जाने क्या आ जाता याद ?
हेरती है सौरभ की हाट
कहो किस निर्मोही की बाट

चाँदनी का शृङ्गार समेट
अधखुली आँखों की यह कोर;
लुटा अपना यौवन अनमोल
ताकती किस अतीत की ओर ?
जानते हो यह अभिनव प्यार
किसी दिन होगा कारागार ?

कौन वह है सम्मोहन राग
खींच लाया तुमको सुकुमार ?
तुम्हें भेजा जिसने इस देश
कौन वह है निष्ठुर कर्तार ?
हँसो पहनो काँटों के हार
मधुर भोलेपन के संसार

१६२७ सितम्बर

फूल

मधुरिमा के, मधु के अवतार
सुधा से, सुषमा से छविमान,
आँसुओं में सहमे अभिरा
तारकों से हे मूक अजा
सीखकर मुस्काने की
कहाँ आये हो कोमल

ये मन्थर सी लोल हिलोर
फैला अपने अञ्चल छोर,
कह जातीं 'उस पार बुलाता-
है हमको तेरा चितचोर'।

यह कैसी छलना निर्मम
कैसा तेरा निष्ठुर व्यापार ?
तुम मन में हो छिपे मुझे
भटकाता है सारा संसार।

१६२६ मई

खोज

प्रथम प्रणय की सुषमा सा
यह कलियों की चितवन में कौन ?
कहता है 'मैंने सीखा उनकी—
आँखों से सस्मित मौन'।

घूँघट पट से झाँक सुनाते
ऊषा के आरक्त कपोल,
'जिसकी चाह तुम्हें है उसने
छिड़की मुझ पर लाली घोल'।

कहते हैं नक्षत्र 'पड़ी हम पर
उस माया की झाँई';
कह जाते वे मेघ 'हमीं उसकी—
करुणा की परछाँई'।

वे मन्थर सी लोल हिलोर
फैला अपने अञ्चल छोर,
कह जातीं 'उस पार बुलाता-
है हमको तेरा चितचोर'।

यह कैसी छलना निर्मम
कैसा तेरा निष्ठुर व्यापार ?
तुम मन में हो छिपे मुझे
भटकाता है सारा संसार !

१९२६ मई

जो तुम आ जाते एक बार

कितनी करुणा कितने संदेश
पथ में बिछ जाते बन पराग;
गाता प्राणों का तार तार
अनुराग भरा उन्माद राग;

आँसू लेते वे पद पखार।

हँस उठते पल में आर्द्र नैन
धुल जाता ओठों से विषाद,
छा जाता जीवन में वसन्त
लुट जाता चिर संचित विराग;

आँखें देतीं सर्वस्व वार।

१६२६ नवम्बर

परिचय

जिसमें नहीं सुवास नहीं जो
करता सौरभ का व्यापार,
नहीं देख पाता जिसकी
मुस्कानों को निष्ठुर संसार;

जिसके आँसू नहीं माँगते
मधुपों से करुणा की भीख,
मदिरा का व्यवसाय नहीं
जिसके प्राणों ने पाया सीख

मोती बरसे नहीं न जिसको
छू पाया उन्मत्त बयार,
देखी जिसने हाट न जिस पर
ढुल जाता माली का प्यार;

चढ़ा न देवों के चरणों पर
गूँथा गया न जिसका हार
जिसका जीवन बना न अबतक
उन्मादों का स्वप्नागार।

निर्जन वन के किसी अँधेरे
कोने में छिपकर चुपचाप,
स्वप्नलोक की मधुर कहानी
कहता सुनता अपने आप।

किसी अपरिचित डाली से
गिरकर जो निरस जंगली फूल;
फिर पथ में बिछकर आँखों में
चुपके से भर लेता धूल।

× × ×

उसी सुमन सा पल भर हँसकर
सूने में हो छिन्न मलीन;
झड़ जाने दो जीवन-माली!
मुझको रहकर परिचयहीन!

१९२९ मई
